विश्व का प्रथम समभाव-समदृष्टि का स्कूल (शीघ्र खुलने जा रहा है)

*"विचार ईश्वर आप नूं मान, अव विचार ईश्वर इक जान"*

*सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ*

# सतयुग-सत्य का स्वर्ण युग तेजी से निकट आ रहा है

# सतयुगी नैतिकता व आचार संहिता

## समभाव समस्त प्राणियों के हृदय में प्रबल होगा

साडा है सजन राम, राम है कुल जहान

यह लेख सतयुग दर्शन ट्रस्ट द्वारा सितम्बर 2008 में आयोजित 'युग परिवर्तन उद्‌घोष' नामक एक भव्य संगीत सन्ध्या कार्यक्रम पर आधारित है जिसे कई टी.वी. चैनलों द्वारा प्रसारित भी किया गया ताकि प्रत्येक व्यक्ति को सतयुग के सुदृढ़ और सर्वोत्कृष्ट संविधान से परिचित कराया जा सके तथा तदनुसार सतयुगी सद्‌गुणों को जीवन में धारण कर जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु उत्साहित किया जा सके।

पवित्र धर्मग्रन्थों के अनुसार यह तो सर्वविदित ही है कि कुदरत ने समयकाल को चार युगों में बाँट रखा है, 'सतयुग', 'त्रेता', 'द्वापर' और 'कलियुग'। वर्तमान युग 'कलियुग' है। कुदरत के नियमानुसार 'कलियुग' के बाद 'सतयुग - एक सुनहरा युग' आना सुनिश्चित है। इसलिए सभी को इस सर्वोत्कृष्ट सत्य के प्रति जागरूक कर सतयुग की नैतिकता के अनरूप ढलने के लिए प्रेरित करना अति आवश्यक है।

सतयुग प्रथम सार्थक, अर्थपूर्ण युग होता है। परिज्ञान, ध्यान, विचाराधिकार, कला-कौशल इस युग में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। ध्यान विशेषतया इस युग में उत्तम स्थिति को प्राप्त होता है तथा समस्त मनुष्य श्रेष्ठ, शुद्ध एवं भलाई के महान कार्यों में संलग्न सदा प्रसन्न रहते हैं। तब कोई रोग-सोग, भिन्न-भेद, जात-पात, अमीरी-ग़रीबी, गरूरी-मगरूरी, पीरी- वज़ीरी, खुशी-ग़मी या मान-अपमान नहीं होता। मनुष्य जो चाहता है वह कला शक्ति द्वारा ही प्राप्त कर लेता है। इस युग में सब मनुष्य ईश्वरीय आज्ञा यानि हुक्म का पालन करते हैं और मनुष्य की हर अभिव्यक्ति व कर्म विशुद्ध व खालिस होते हैं। वे शिष्टाचारी व मधुरभाषी होते हैं जो आपसी बातचीत के दौरान 'जी' शब्द का प्रयोग करते हैं। वे जानते हैं कि 'जी' एक आदरसूचक शब्द है और इस शब्द के प्रयोग द्वारा एक दूसरे के प्रति उनका आदर-भाव मज़बूत रह सकता है। समस्त मनुष्य जाति को तब सर्वोच्च आनन्द प्राप्त होता है और नर-नारी सब की नौजवान युवावस्था होती है। सतयुगवासी जो आचरण स्वयं करते हैं, उसी का दूसरों को उपदेश देते हैं और इस प्रकार सबसे मित्रवत् व्यवहार करते हुए शान्तमय बने रहते हैं। परिणामस्वरूप अधिकांश लोग तब समान भाव से रहते हुए समदर्शी होते हैं।

## सतयुगी सजनों की प्रकृति और व्यवहार

सतयुग के सजन जो नैतिकता अर्थात् सद्‌व्यवहार यानि व्यवहार की रीति, सदाचार यानि आचार पद्धति, शील प्रकृति या स्वभाव, आचरण संबंधी नियम या कायदा खुद अपनाते हैं, अपनी संतानों को भी जन्म उपरांत उसी अनुरूप ही ढालते हैं ताकि हर सजन का व्यवहारिक रूप सतवस्तु के मूल गुण अर्थात् समभाव-समदृष्टि युक्त हो। ऐसा करना वे केवल अपना कर्त्तव्य ही नहीं बल्कि धर्म भी समझते हैं। यह क्रिया एक प्रकार से उनका विशुद्ध सत्यज्ञान से परिचय करा उनमें इंसानियत का माद्दा परिपूर्णता और परिपक्वता से भरने हेतु होती है। सतयुग में संतोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म, निष्कामता, परोपकारता और ध्यान नैतिकता के स्तंभ होते हैं। तभी तो वे सजन संतोषी, धैर्यवान, सत्यनिष्ठ व धर्मपरायण होते हैं। हम कह सकते हैं कि समभाव उनके खून में यानि रग-रग में होता है जिसके सद्‌प्रभाव से जिनकी ज्ञानेन्द्रियों के समस्त क्रियाकलाप सकारात्मक हो जाते हैं वही समदृष्टा कहलाता है।

यहाँ इस सत्य को वे जानते हैं कि कुसंग हमारा कोई भी नहीं। कुसंग हमारा संकल्प ही है। इसलिए वे संकल्प कुसंगी को संगी बनाए रखने की ख़ातिर अपनी संतानों को बाल्यावस्था से ही सद्‌चरित्र व धर्मपरायण बनाने हेतु उनके दिलों में सजन-भाव का संचार करने के साथ-साथ संतोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म जैसे गुणों का वर्धन करने का कर्तव्य बखूबी निभाते हैं। इस हेतु वे खुद उनका आदर्श बनते हैं। यह इसलिए आवश्यक समझा जाता है ताकि हर प्राणी आजीवन सच्चाई और धर्म के मार्ग पर निर्भयता से आगे बढ़ता रहे। इस प्रकार संतोष-धैर्य की पोशाक पहन जब वे सच्चाई धर्म के रास्ते पर निरंतर डटे रहते हैं तो उनके अंदर तीनों तापों का टैम्प्रेचर घटता-बढ़ता नहीं अपितु

सम रहता है।

यह कार्य वे सहजता से दिनचर्या में जो आपसी वार्तालाप और व्यवहार होता है उस समय का सदुपयोग करते हुए भावी पीढ़ी को संतोष, धैर्य, सच्चाई और धर्म पर अटल बने रहने के सद्प्रभावों से परिचित कराते हुए कर लेते हैं। उन्हें इस प्रकार परिपक्व बनाना वे अपना कर्त्तव्य समझते हैं। वे इस कर्त्तव्य को हँस कर निभाते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि ऐसा करना समाज के लिए हितकारी है। इसी परिपक्वता द्वारा सजनों की उच्च बुद्धि, उच्च ख्याल, भक्ति प्रबल और शक्ति ताकतवर हो जाती है अर्थात् नौजवान युवा-अवस्था बनी रहती है।

## सार्वजनिक कल्याण

यहाँ इस सत्य को भी जान लेना आवश्यक है कि जहाँ समभाव है वहाँ संकल्प नहीं होता। यह सारी क्रिया अन्दरूनी वृत्ति में होती है जिसका बैहरूनी वृत्ति द्वारा सबको दर्शन होता है। तभी तो सतयुग का हर सजन चरित्रवान और धर्मपरायण होता है।

उनके मन, वचन, कर्म द्वारा सभी का कल्याण होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि उनको अपने नैतिक बल का प्रयोग संयमित रूप से समभाव-समदृष्टि अपना कर खुद को, परिवारजनों को और समाज को संभाले रखने के लिए हितकर लगता है। सतयुग के सजन विचार ईश्वर है अपना आप के तथ्य और सत्य को स्वीकारते हैं। उन्हें पाँच तत्वों के शरीर के अंदर अपने असलियत ब्रह्म-स्वरूप-जिसका रूप, रंग, रेखा नहीं होता उस का एहसास सदा बना रहता है। यही कारण है कि उन जीवों का ख़्याल शरीर में रहते हुए भी सदैव उससे निर्लेप रहता है। वे यह भी जानते हैं कि उनका अपना असलियत स्वरूप अर्थात् ब्रह्म सत्ता ही हर अंदर कोने-कोने, डाली-डाली प्रकाशित है। वे इस तथ्य को भी जानते हैं कि ब्रह्म जीव अभेद है, अभिन्न है और वही ब्रह्म ज्ञान का स्रोत है।

## अपने असलियत स्वरुप पर संकेन्द्रित

इसलिए वे सजन उसी स्रोत से सत्य-ज्ञान प्राप्ति हेतु अपना **ख़्याल ध्यान वल, ध्यान प्रकाश वल जोड़े रखते हैं** अर्थात् उनका जहाँ ख़्याल होता है वहीं दृष्टि होती है। इस ब्रह्म, जीव और जगत के बारे में सत्य ज्ञान-धारणा क्रिया द्वारा वह सदा सत्यनिष्ठ और धर्मपरायण बने रहते हैं।

इसी सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार सतयुग आते ही द्वापर, त्रेता और कलियुग के सब ग्रन्थ शांत हो जाते हैं परिणास्वरूप ख़्याल बैहरूनी-वृत्ति में विचरते हुए भी अन्दरूनी वृत्ति में अपने असलियत प्रकाश में ठहरा रहता है यानि ''जहाँ ख़्याल है वहाँ दृष्टि'' की युक्ति द्वारा उन सजनों का ख़्याल स्वच्छ और दृष्टि नित्य कंचन बनी रहती है।

**यह ख़्याल और दृष्टि की एकाग्र अवस्था अर्थात् ध्यान का सधना उन सजनों के लिए सत्य-ज्ञान प्राप्ति सुगम बना देता है। सतयुग के सजन यह जानते हैं कि जो ब्रह्म-प्रकाश या स्वरूप उनके अपने मन-मंदिर में स्थित है, वही प्रतिबिम्ब जनचर-बनचर, जड़-चेतन में भी प्रकाशित है।**

सत्य-ज्ञान द्वारा विकसित उच्च बुद्धि, उच्च ख़्याल वाले सजनों के लिए फिर सर्गुण, निर्गुण, निर्वाण समरूप हो जाते हैं। इस अवस्था को हम उनके हृदयों में समभाव-समदृष्टि का बीजारोपण भी कह सकते हैं। समभाव-समदृष्टि जैसे मूल गुण के विकास के अनुपात अनुरूप वे आत्मज्ञानी सजन-भाव का सद्प्रभाव गहनता से समझते हैं।

वे जानते हैं कि जहाँ द्वि-भाव, वैर-भाव दिलों को तोड़ते हैं वहीं समभाव व सजन-भाव दिलों को जोड़ते हैं। तभी उनका आपसी आचार, विचार, व्यवहार समानता वाला होता है और सजन-भाव के प्रयोग द्वारा वे अपने उद्धार हेतु अपने आप को और सुधारने व सँवारने की क्रिया परस्पर जारी रखते हैं तभी वे सब भले आदमी अर्थात् हितकारी कहलाते हैं।

## सात्विक आहार-जीवन सार का तत्व

सतयुग के सजन सात्विक, राजसिक और तामसिक आहार के सभी गुण-दोषों से भली-भांति परिचित होते हैं। इसीलिए वे सात्विक आहार का ही सेवन करते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि सात्विक आहार से शरीर का वर्धन करने वाली धातुएँ यथा रस, रक्त, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र भी सात्विक ही बनते हैं। आहार शुद्धि से सत्वशुद्धि, सत्वशुद्धि से ध्रुवा स्मृति और स्मृति शुद्धि से सभी ग्रन्थियों का मोचन होता है जिससे व्यक्ति का भाव, स्वभाव, वृत्ति, स्मृति, वाणी आदि निर्मल हो जाते हैं और यह निर्मलता का प्रवाह रोम-रोम, रग-रग को सम्पूर्ण स्वस्थता में संजोए रखता है। फिर पूर्व-जन्म, कुल-मर्यादा, शिक्षा आदि का मन पर पड़ने वाला प्रभाव दोष-रहित अर्थात् सकारात्मक होता है और व्यक्ति सद्-व्यवहार करता है और सदाचारी कहलाता है।

यहाँ यह तो सभी जानते हैं कि आहार-विहार से रक्त शुद्ध होता है, नाड़ियों की शुद्धि होती है, शारीरिक धातुओं में समता आती है, मन सबल हो जाता है, बुद्धि शुद्ध होती है, संतोष और प्रसन्नता आती है तथा चिन्तन शक्ति बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त जो हमारे अन्दर प्रतिक्षण संयोजन व विभेदीकरण की प्रक्रिया द्वारा कोशिकाओं के नवीनीकरण तथा शारीरिक निर्माण यानि वृद्धि की प्रक्रिया चलती रहती है, उसे समरूप से सदा सात्विक वातावरण प्राप्त होता रहता है। इसी कारण उनके अंदर कोई जरम-जहरीला पैदा होने की गुंजाइश नहीं रहती और वे सजन सदा निरोगी अथवा शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ बने रहते हैं। तभी तो उनकी आयु लम्बी होती है और उनके लिए मन, रुचि, आचार-विचार आदि को परिष्कृत तथा उन्नत करने का कार्य सुगम हो जाता है। **यही कारण है कि सतयुग की संस्कृति सुदृढ़ और सर्वोत्कृष्ट मानी जाती है और मानवता के उत्थान के लिए अनुकरणीय है।**

सतयुग के सजन विवेकी अर्थात् भले-बुरे का ज्ञान रखने वाले होते हैं। यहाँ समझने की आवश्यकता है कि विवेक क्या है? विवेक मन की वह शक्ति है जिससे भले-बुरे का ठीक और स्पष्ट ज्ञान होता है अर्थात् इस शक्ति के प्रयोग द्वारा सत्य-ज्ञान प्राप्त होता है। इसीलिए वे बुद्धिमान, न्यायशील कहलाते हैं और एक न्यायाधीश की तरह हर वस्तु या तर्क-वितर्क का अनुसंधान कर विचार-पूर्वक सर्वहित अनुसार ही निर्णय लेते हैं। तभी तो उस

युग में कोई लड़ाई-झगड़ा, वैर-विरोध आदि नहीं होता और सदा एकता, सुख और शांति का वातावरण बना रहता है।

सतवस्तु में संकल्प नहीं होता लेकिन त्रेता में संकल्प पैदा होने के कारण झुखना शुरू और रोना उग पड़ता है। कलियुग तक स्वभावों में तबदीली होने के कारण संकल्प बिल्कुल बढ़ जाता है और झुखना ही झुखना व रोना ही रोना हद से ज्यादा हो जाता है।

## समभाव-समदृष्टि

इस कठिन परिस्थिति से उबारने हेतु अर्थात् संकल्प कुसंगी को संगी बनाने के लिए आती है युवावस्था की भक्ति अर्थात् समभाव-समदृष्टि की युक्ति फिर जब समभाव हृदय में स्थित हो जाता है तो विकार फैलाने वाले भाव निष्क्रिय हो जाते हैं, फलस्वरूप बलवर्धन होता है।

इंसान स्वयं को शक्तिशाली महसूस करता है और उच्च बुद्धि, उच्च ख़्याल हो समदृष्टा हो जाता है फिर उसी शक्ति का बुद्धिमता से युक्तिसंगत प्रयोग कर वह संतोष-धैर्य पर सुदृढ़ रह सच्चाई-धर्म की राह पर निर्भयता से इस जगत में विचरता है। इस प्रकार वह विचार, सतज़बान, एक दृष्टि, एकता और एक अवस्था में बना रह संकल्प पर फ़तह पा जाता है और उसका झुखना-रोना समाप्त हो जाता है। तभी तो कहते हैं कि युग-युग में रोना बढ़ता है और सतवस्तु में रोना मिटता है। यही कारण है कि सतवस्तु में सभी सजनों का हृदय कोमल होता है और वे प्रसन्नचित्त बने रहते हैं।

वे एक ही भावना से शासित होकर शुद्ध चित्त से निष्पक्षता एवं सत्यतापूर्वक दूसरों को अपने ही समान जानकर व्यवहार करना और तृष्णा, आसक्ति, राग-द्वेष आदि से रहित होकर मित्रता की दृष्टि से देखना उचित मानते हैं। तभी तो वैश्विक एकता बनाए रखने में वे स्वयं समर्थ होते हैं और उनके दिलों में किसी के भी प्रति शत्रुता व दुश्मनी का भाव नहीं होता। यह तथ्य जनाता है कि वे अहिंसा का समर्थन करने वाले होते हैं।

वे जानते हैं कि समभाव का आधार मूल परमतत्व है यानि तत्वज्ञान के बिना समभाव नहीं आ सकता। इसीलिए वे ब्रह्मज्ञान प्राप्ति की, मानव के बौद्धिक विकास हेतु आवश्यकता और ख़्याल पर सकारात्मक प्रभाव से भली-भाँति परिचित होते हैं।

वे ख़्याल की नित्य स्वच्छता बनाए रखने के महत्त्व को भी जानते हैं कि यथा ख़्याल वैसे ही विचार, कर्म, स्वभाव, चरित्र और प्रारब्ध होगी।

## आध्यात्मिक ज्ञान

इसी को दृष्टिगत रखते हुए वे भौतिकवाद के स्थान पर अध्यात्मवाद अर्थात् ब्रह्म, आत्मा और ईश्वर आदि के संबंध के सच्चे और यथार्थ ज्ञान प्राप्ति को प्राथमिकता देते हैं। तभी तो वे तत्वज्ञानी या हम कह सकते हैं दार्शनिक-ब्रह्म और जीव में भेद नहीं मानते और यही विचारधारा भावी संतानों में दृढ़तापूर्वक प्रतिष्ठित करने हेतु वे उन्हें ईश्वर की सर्वव्यापकता इस प्रकार जनाते हैंः-**''विचार ईश्वर आप नूं मान अर्थात् ईश्वर है अपना आप प्रकाश, ईश्वर है जे अजपा जाप।''**

यही कारण है कि सतवस्तु में विचार, सतज़बान होती है, एक दृष्टि, एकता और एक अवस्था जगत जहान होती है। न जप, न तप, न सिमरण, न भजन, न बन्दगी होती है। तब मन्दिर, मस्जिद, समाज, गुरुद्वारे या किसी अन्य धर्म-संस्था आदि बनाने की आवश्यकता भी नहीं रहती और न ही तब भिन्न-भिन्न प्रकार के भक्ति-भाव जैसे सेवक-स्वामी, भक्त-भगवान व गुरु-चेले की प्रथा होती है। इसी प्रकार तस्वीरों और शरीरों की पूजा-मानता भी नहीं होती क्योंकि खुला प्रकाश होता है।

सतयुग के सजन इन मूल गुणों की ज्ञान-धारणा-क्रिया द्वारा इनके सभी आयामों से पूर्णतया विधिवत् परिचित रहते हैं और अपनी संतानों के मन-मस्तिष्क को इन गुणों के अनुरूप ढालना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी हर सजन का मन समभाव में स्थित रहता है और वह निष्काम कर्म करते हुए समदृष्टा हो जाते हैं। तभी तो समभाव सतयुगियों का सर्वश्रेष्ठ आदर्श माना गया है क्योंकि वे समता के प्रति समर्पित होते हैं।

**सतयुग के इंसान आत्मसंयमी होते हैं व सृष्टि संरचना में सहयोग देने हेतु प्रजनन-क्षमता का सच्चरित्र संतान प्राप्ति हेत कुशलतापूर्वक प्रयोग करते हैं** क्योंकि वे जानते हैं कि संतान की श्रेष्ठता संसर्ग के समय ख़्याल की स्वच्छता के अनुरूप होती है। वे यह भी जानते हैं कि ख़्याल ही ढलता-ढलता इंसान के भाव, स्वभाव, करनी, चरित्र और भाग्य का रूप ले लेता है। इसी कारण उनकी संतानें पूर्णतया स्वस्थ व सतवस्तु के आदर्शों के अनुरूप विद्वान, गुणवान, बलवान, बुद्धिमान तथा ज्ञानवान होती हैं। यही दक्षता सतयुगियों की सर्वोत्कृष्ट नैतिकता का आधार होती है।

**तभी तो भारतीय आद् संस्कृति अपने आप में परिपूर्ण एवं विश्व शिरोमणि मानी गई है।**

## सतयुग के वैज्ञानिक

इसी सन्दर्भ में सतयुग के वैज्ञानिक प्रकृति की सम्पूर्णता पर शोध करते हैं। वे समभाव-समदृष्टि के ऐसे संविधान का गठन करते हैं जिसका आधार समस्त प्राणियों को प्राकृतिक रूप से एक समान समझना होता है। वे कभी भी अपनी ऊर्जा व्यर्थ के झगड़ों, तर्कों व द्वैतभाव फैलाने में नष्ट नहीं करते। वे परोपकारी प्रकृति के होते हैं जो अपनी पूरी ऊर्जा एवं बुद्धि-कौशल का प्रयोग मानव जाति की भलाई के लिए करते हैं यानि जन्म से ही वे प्रत्येक प्राणी को सम, सन्तोष, धैर्य, सच्चाई व धर्म की उचित जानकारी देने में अपनी ऊर्जा का व्यय करते हैं। सजनता, उत्कृष्टता निष्कामता व परोपकारता उस समय का कानून होता है। वे तीनों तापों (यानि अध्यात्मिक, अधिभौतिक एवं अधिदैविक) का तापमान आवश्यक स्तर पर बनाए रखने में दक्ष होते हैं जिसके कारण उनके मस्तिष्क की साम्यावस्था अविचल बनी रहती है और वे इंसानियत के प्राकृतिक स्वभाव में खरे बने रहते हैं।

वे निर्मल बुद्धि हर वस्तु का यथार्थ जानने में निपुण होते हैं इसीलिए सतवस्तु में कला से सब कुछ उपजता है। कहने का

तात्पर्य यह है कि तब ज्ञान-विज्ञान द्वारा केवल सत्य ही प्रसारित किया जाता है। इसीलिए सत्य के आधार पर उन्नति कर सतवस्तु का समयकाल स्वर्ण-युग कहलाता है और कुदरती साईंस के वे वैज्ञानिक आज भी सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं।

सतयुग में सतवस्तु श्री विष्णु भगवान शंख, चक्र, गदा, पद्मधार हृदयों में प्रगटते हैं और उस सर्वज्ञ हीरे को हर जीव पहचानने वाला होता है। हम कह सकते हैं कि सभी के हृदयों पर एक ही का साम्राज्य होता है तभी तो उन्हीं के वचनों अर्थात् हुक्म की पालना होती है और सजनों की एकता और उनका मानसिक संतुलन एक अवस्था में सदैव बना रहता है। परिणामस्वरूप सब निर्विकारी होते हैं।

संक्षेपतः हम कह सकते हैं कि सतयुगी नैतिकता बौद्धिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के विकास का आधार है जिसका प्रभाव मनुष्य के समस्त क्रियाकलापों से प्रकट होता है। यह मनुष्यता अर्थात् मनुष्य में निम्नतर प्रवृत्तियों का दमन एवं उच्चतर विचारों का सृजन है। इस से अलंकृत व्यक्ति न केवल संयमी, विनम्र, उदार, सहिष्णु, सच्चरित्र, उद्यमी, कर्त्तव्यनिष्ठ, सेवापरायण व परोपकारी बना रहता है वरन् वह अपने व्यवहार द्वारा अपनी तथा दूसरों की रक्षा भी करता है अर्थात् नैतिकता का अभिप्राय मानव जीवन में सामंजस्य, सहयोग और उन्नयन को संभव बनाने वाली आचार-पद्धति से है।

यहाँ हम सब को यह बता देना चाहते हैं कि हमारा यह प्रयास केवल सतयुग की नैतिकता बता देने तक ही सीमित नहीं है अपितु विश्व के हर मानव के अन्दर यह व्यापक गुण अर्थात् सार्वजनिक कल्याण की भावना भरने हेतु हमें हर बुद्धिजीवी के सहयोग की आवश्यकता है ताकि सतयुग अनुरूप नैतिकता का वर्धन शीघ्रतातिशीघ्र हो पाए। सभी मानेंगे कि मानव जाति समभाव-समदृष्टि और सजन-भाव के अनुरूप स्वभावों को जितनी जल्दी ग्रहण करने की चेष्टा करेगी उतनी ही जल्दी मनुष्य की विचारधारा प्राकृतिक हो जीवन की वास्तविकता को सहजता से समझ सकेगी और इस प्रकार समाज में फैले हर प्रकार के आडम्बर व भ्रांतियाँ समाप्त हो जाएँगी, तभी लोगों का ध्यान जगत के दृश्यों से हटकर अपने असलियत स्वरूप अर्थात् ईश्वर से जा जुड़ेगा। तब जाकर मनुष्य के लिए संतोष और धैर्य से विकसित गुण उनकी नैतिकता के आभूषण होंगे और मानव के लिए सत्यनिष्ठ और धर्मपरायण बने रहना कोई कठिन कार्य नहीं रहेगा।

## सतयुग की लहर

**इसी सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार सतयुग की लहर चारों दिशाओं से आरम्भ है। इसका फैलाव धीरे-धीरे आकाशों-आकाश, पातालों-पाताल, सप्तद्वीप- गगनमंडल और भूमंडल के जनचर, बनचर, जड़-चेतन को अपने में सम्मोह लेगा। इस प्रक्रिया के दौरान जहाँ-जहाँ, जैसे-जैसे, जितना-जितना ब्रह्मांडीय क्षेत्र सतवस्तु से प्रभावित होगा, वैसे-वैसे, वहाँ-वहाँ से कलियुग समाप्त होता जाएगा और सतयुग का शुभारंभ होता जाएगा। फिर कुछ समय पश्चात् सतवस्तु का प्रकाश कलियुग के अंधकार को सम्पूर्णतया विध्वंस कर देगा।**

यहाँ हम यह भी बता देना चाहते हैं कि कुदरती साईंस के अनुसार सौरमंडल में इस प्रक्रिया का शुभारंभ हो चुका है। लगता है कि इस प्रक्रिया द्वारा पाँचों तत्व यथा पृथ्वी, अग्नि, जल, वायु, आकाश का पुनः विशुद्धिकरण हो जाएगा जिससे चर-अचर प्राणियों पर सौरमंडल से आने वाली ऊर्जा का प्रभाव सम बना रहेगा और तीनों तापों का टैम्परेचर न घटेगा न बढ़ेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि ईश्वर की बनाई हुई हर कृति अपनी बनत के यथा अनुरूप स्वस्थ और सुंदर बनी रहेगी। इसके अतिरिक्त मानव-जाति जो कुदरत की सबसे श्रेष्ठ कृति है उनके हृदयों में समभाव का उद्भव होगा। इस उद्देश्य-पूर्ति हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के निर्देशानुसार समभाव- समदृष्टि का स्कूल शीघ्र ही यहाँ खुलने जा रहा है ताकि हर मानव के अन्दर इस मूल ईश्वरीय गुण का विधिवत् संचार किया जा सके।

अतः हमारी सम्पूर्ण विश्व के बुद्धिजीवी सजनों से प्रार्थना है कि इस प्रयास को आगे बढ़ा वास्तविक रूप देने के लिए न केवल हमें अपने-अपने सुझाव प्रेषित करें वरन् अपने-अपने संस्थानों पर ऐसे स्कूल खोलने का निर्णय भी शीघ्र लें। आप स्वीकारेंगे कि यह सार्वजनिक हित हेतु सभी सजनों को सुसंस्कृत बना उनके चारित्रिक उत्थान के लिए अति आवश्यक है।

## समभाव दी होसवे फ़तह

यहाँ यह भी आप अवश्य जानते होंगे कि युग-परिवर्तन अर्थात् कलियुग की पीड़ा हर, धर्म की पुनः स्थापना का यह महत्त्वपूर्ण कार्य कुदरत ने **सजन श्री शहनशाह हनुमान जी को सौंपा है।** सजन श्री शहनशाह हनुमान जी ही कुल ब्रह्मांड में धर्म का झंडा झुला सुकर्मों का राज लाने में समर्थ हैं। उनके प्रताप से ही निर्मलता व सुख-शांति का प्रवाह और खुशहाली व समृद्धि वातावरण में आएगी। यहाँ तक कि रोगों की सरदार विसूचिका भी अपना जीवन बना सूचिका बन जाएगी। इस प्रकार उनकी लीला से कलियुग का बखेड़ा ही मिट जाएगा।

### *शुभकामना*

*हमारी प्रभु से प्रार्थना है कि वह सभी को बल, बुद्धि और ज्ञान बख्शें, ताकि सभी अपने भाव-स्वभाव परिवर्तित कर सतवस्तु में प्रवेश पा जाएं।*

*इसलिए आओ समभाव-समदृष्टि अपनाएं और वास्तविक रूप से सजन बनकर सतयुग की ओर बढ़ें।*

*जय सीताराम जी।*

*अधिक जानकारी के लिए, संपर्क करें*
**सतयुग दर्शन ट्रस्ट (रजि.)**
'वसुंधरा', ग्राम भोपानी, लालपुर रोड, फरीदाबाद – 121002 (हरियाणा)
दूरभाषः 0129 2202316/820/821 Ext. 504/510
मोबाइलः 09811016239, 09811066127
इमेलः info@satyugdarshantrust.org वेबसाइटः www.satyugdarshantrust.org

© Satyug Darshan Trust (Regd.)

उपरोक्त लेख टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली के विशेष परिशिष्ट 'द स्पीकिंग ट्री' में दि.27 जून 2010 को पृष्ठ 3 में प्रकाशित लेख का हिन्दी भाषान्तर है।